

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 1 अध्याय 1: ऋषियों के प्रश्न

11 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



पवित्र नैमिषारण्य वन में शौनक ऋषि तथा ऋषियों की महती सभा पूज्य सूत जी का सम्मान करती है और उनके समक्ष वे प्रश्न रखती है जिनसे श्रीमद्भागवत का आरम्भ होता है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिमयी यात्रा। आज हम उस महान कथा-सरिता के उद्गम पर खड़े हैं — प्रथम स्कन्ध का प्रथम अध्याय। यहाँ, दीर्घकालीन तप से पावन हुए एक वन में, सच्चे जिज्ञासुओं की एक सभा वे प्रश्न पूछती है जिनसे समस्त शास्त्र प्रवाहित होगा। एक भी कथा कहे जाने से पूर्व ही भागवत हमें आरम्भ करना सिखा देता है

— श्रद्धा के साथ, उचित प्रश्नों के साथ, और भगवान् की महिमा सुनने की उत्कट अभिलाषा के साथ।

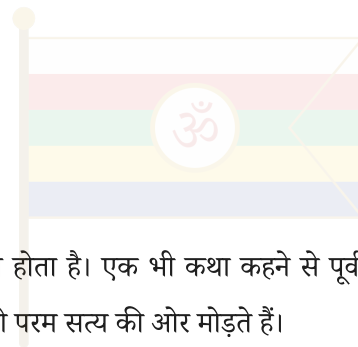
अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 1 (प्रथम स्कन्ध)
- अध्याय: 1 (प्रथम अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: ऋषियों के प्रश्न
- प्रमुख वक्ता: महर्षि वेदव्यास (मंगलाचरण) तथा नैमिषारण्य की ऋषि-सभा
- प्रमुख श्रोता: पूज्य सूत जी, उग्रश्रवा, प्राचीन कथाओं के वक्ता
- मुख्य स्थल: नैमिषारण्य वन, भगवान् विष्णु को प्रिय
- केन्द्रीय विषय: तीन महान प्रश्न — परम कल्याण का एकमात्र साधन, भगवान् के अवतार का प्रयोजन, और कलियुग में धर्म ने कहाँ शरण ली
- प्रमुख श्लोक-परास: स्कन्ध 1, अध्याय 1, श्लोक 1-23
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

ग्रन्थ का आरम्भ ध्यान से होता है

भागवत का आरम्भ किसी घटना से नहीं होता। इसका आरम्भ एक पूजन से होता है। एक भी कथा कहने से पूर्व महर्षि वेदव्यास — जिन्हें बादरायण भी कहते हैं — मंगलाचरण नामक इस प्रसिद्ध स्तुति में अपने मन को परम सत्य की ओर मोड़ते हैं।

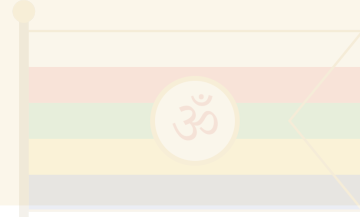
हम उस परम सत्य का ध्यान करते हैं, यह श्लोक कहता है, जिससे यह सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न होता है, जिसमें यह स्थित रहता है, और जिसमें यह पुनः लीन हो जाता है। वे समस्त सत्ता में विद्यमान हैं, फिर भी समस्त असत् से भिन्न हैं। वे स्वयंप्रकाश और स्वयंज्ञ हैं, अपने ही प्रकाश से देदीप्यमान। उन्होंने ही अपनी इच्छामात्र से आदिकवि ब्रह्मा को वेदों का ज्ञान प्रदान किया — वे वेद जो बड़े-बड़े ऋषियों को भी मोहित कर देते हैं। उन्हीं में यह त्रिगुणात्मक सृष्टि, सत्त्व-रज-तम से बुनी हुई, यद्यपि मिथ्या है, तथापि अपने अधिष्ठान की सत्ता के कारण सत्य-सी प्रतीत होती है — जैसे सूर्य की किरणें मरीचिका में जल-सी भासती हैं। और अपनी ही स्वयंप्रकाश महिमा से वे सदा समस्त माया का निरसन कर देते हैं। उसी परम सत्य पर, और किसी लघुतर पर नहीं, ऋषि अपना मन स्थिर करते हैं।





भागवत का आरम्भ उस परम सत्य के ध्यान से होता है जिससे समस्त वस्तुएँ प्रकट होती हैं (श्लोक 1)।

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्
तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत्सूरयः ।
तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृषा
धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ॥ १ ॥



janmādyasya yato'nvayād itarataś cārtheṣv abhijñāḥ svarāṭ tene brahma hṛdā ya ādi-kavaye muhyanti yat sūrayaḥ । tejo-vāri-mṛdāṁ yathā vinimayo yatra tri-sargo'mṛṣā dhāmnā svena sadā nirasta-kuhakaṁ satyaṁ paraṁ dhīmahi ॥ 1 ॥

अर्थ: हम उस परम सत्य का ध्यान करते हैं जिससे यह जगत् उत्पन्न होता है, जिसमें स्थित रहता है और जिसमें लीन होता है; जो स्वयंप्रकाश और सर्वज्ञ है; जिसने आदिकवि ब्रह्मा को वेदों का ज्ञान दिया; जिसमें त्रिगुणात्मक सृष्टि मिथ्या होते हुए भी सत्य-सी भासती है; और जो अपने ही प्रकाश से सदा समस्त माया का निवारण कर देता है। (स्कन्ध 1, अध्याय 1, श्लोक 1)

सत्य को प्रणाम करने के पश्चात् व्यास जी हमें बताते हैं कि यह ग्रन्थ क्या है। इस दिव्य भागवत में परम धर्म का उपदेश है — भगवत्प्रेम का धर्म, जिसे भागवत धर्म कहते हैं। यह कामनाजनित समस्त कपट से पूर्णतया रहित है, मोक्ष की कामना से भी रहित। यहाँ उस परम तत्त्व का प्रतिपादन है जिसे केवल वे ही सन्त जानते हैं जिनके हृदय में द्वेष नहीं; वह तत्त्व जो परम आनन्द प्रदान करता है और त्रिविध ताप को उखाड़ फेंकता है — आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक ताप। अन्य साधनों से यह निश्चित नहीं कि भगवान् शीघ्र हृदय में धारण किये जा सकें। किन्तु इस ग्रन्थ के द्वारा वे उन धन्य जनों के हृदय में तत्काल आ बसते हैं जो केवल इसे सुनने की उत्कट अभिलाषा रखते हैं।

धर्मः प्रोज्झितकैतवोऽत्र परमो निर्मत्सराणां सतां
वेद्यं वास्तवमत्र वस्तु शिवदं तापत्रयोन्मूलनम् ।
श्रीमद्भागवते महामुनिकृते किं वा परैरीश्वरः
सद्यो हृद्यवरुध्यतेऽत्र कृतिभिः शुश्रूषुभिस्तत्क्षणात् ॥ २ ॥

dharmah projjhita-kaitavo 'tra paramo nirmatsarāṇāṁ satāṁ vedyam vāstavam atra vastu śivadam tāpa-trayonmūlanam । śrīmad-bhāgavate mahā-muni-kṛte kiṁ vā parair īśvaraḥ sadyo hṛdy avarudhyate 'tra kṛtibhiḥ śuśrūṣubhis tat-kṣaṇāt ॥ 2 ॥

अर्थ: यहाँ उस परम धर्म का प्रतिपादन है, जो प्रत्येक स्वार्थपूर्ण बहाने से रहित है और केवल निर्मल, निर्द्वेष हृदय वाले सन्तों को ही ज्ञेय है — वही वस्तु जो परम कल्याण देती है और त्रिविध दुःख को जड़ से उखाड़ फेंकती है; जब यह भागवत ही श्रद्धापूर्वक सेवन करने वालों के हृदय में भगवान् को तत्काल बसा देता है, तो अन्य किसी शास्त्र की क्या आवश्यकता रह जाती है? (स्कन्ध 1, अध्याय 1, श्लोक 2)

वेद-वृक्ष का पका हुआ फल

तत्पश्चात् व्यास जी एक ऐसी उपमा देते हैं जो अपनी कोमलता में युगों से पूजनीय रही है। वेद, वे कहते हैं, एक कल्पवृक्ष है, और श्रीमद्भागवत उसका पका हुआ फल है — शुकदेव जी के मुख से पृथ्वी पर गिरा हुआ, परम आनन्द के अमृत-रस से परिपूर्ण। यह निर्मल मधुरता है, बिना छिलके और बिना गुठली के, शुद्ध सार। और इसीलिए ऋषि प्रत्येक रसिक हृदय को पुकारते हैं: हे दिव्य आनन्द के रसिक भक्तों! इस भागवत-रूपी अमृत का पान बार-बार करो, जब तक तुममें चेतना शेष है।



भागवत वेद-वृक्ष का पका हुआ फल है, जो शुकदेव जी के मुख से गिरा (श्लोक 3)।

निगमकल्पतरुर्गलितं फलं शुक्लमुखादमृतद्रवसंयुतम् ।

पिबत भागवतं रसमालयं मुहुरहो रसिका भुवि भावुकाः ॥ ३ ॥

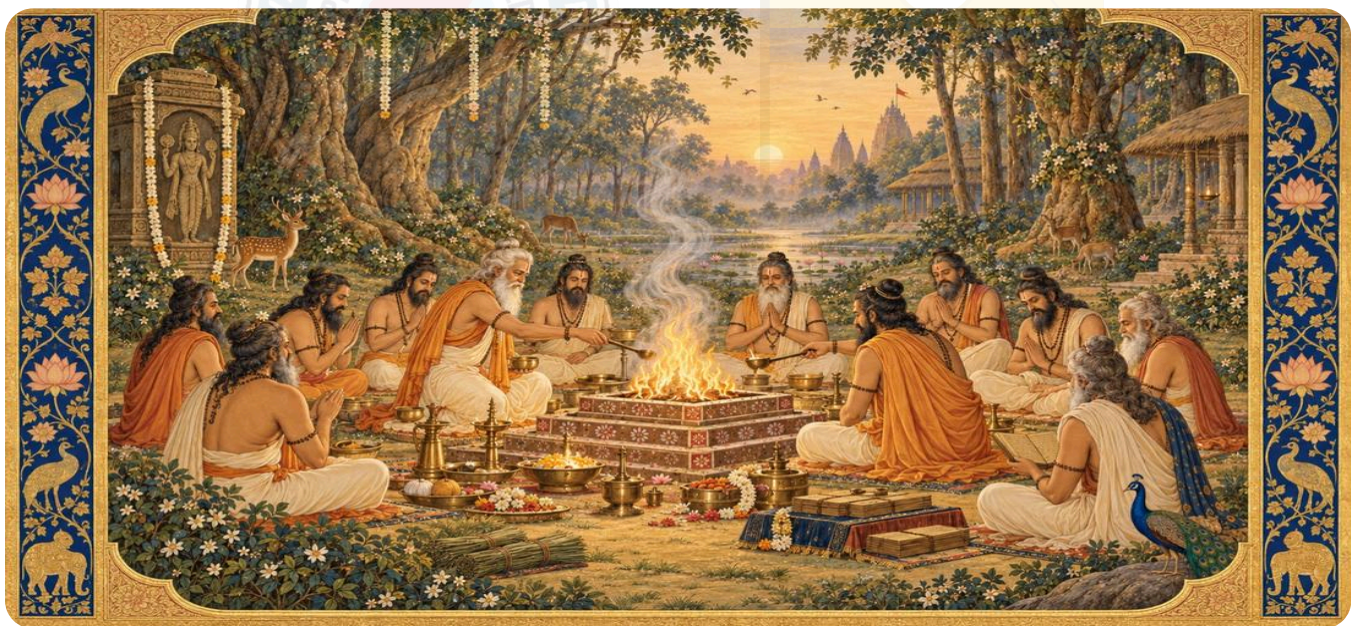
nigama-kalpataror galitaṁ phalaṁ śuka-mukhād amṛta-drava-saṁhyutam । pibata bhāgavataṁ rasam ālayaṁ muhur aho rasikā bhuvi bhāvukāḥ ॥ 3 ॥

अर्थ: श्रीमद्भागवत वेद-रूपी कल्पवृक्ष का पका हुआ फल है, जो शुकदेव जी के मुख से गिरा और अमृत से परिपूर्ण है; हे रसिक भक्तों! इस अमृत-रस का पान इस पृथ्वी पर बार-बार करो। (स्कन्ध 1, अध्याय 1, श्लोक 3)

यहाँ एक कोमल शब्द-क्रीड़ा है: शुक का अर्थ “तोता” भी होता है, और यह प्रसिद्ध है कि तोते के चखे हुए फल की मधुरता सबसे अधिक होती है। भागवत, शुद्ध शुकदेव जी के मुख से होकर आया हुआ, वही परम मधुर फल है — अब हमारे ग्रहण करने के लिए तैयार।

नैमिषारण्य वन में एक यज्ञ

मंगलाचरण के पूर्ण होने पर दृश्य पृथ्वी पर खुलता है। एक बार, नैमिषारण्य नामक वन में — जो भगवान् विष्णु को प्रिय स्थल है — शौनक ऋषि तथा अन्य अनेक ऋषि एकत्र हुए थे। उन्होंने मिलकर एक महान यज्ञ का अनुष्ठान किया था, जिसका संकल्प विशाल था, जो सहस्र वर्षों तक चलने वाला था, और जिसका एकमात्र उद्देश्य था — उन भगवान् की प्राप्ति, जो स्वर्ग में गाये जाते हैं और जो अपने भक्तों के आश्रय हैं।



नैमिषारण्य वन में, जो भगवान् विष्णु को प्रिय है, शौनक ऋषि तथा ऋषियों की सभा सहस्र वर्षों तक चलने वाला एक यज्ञ आरम्भ करती है।

एक प्रातःकाल, अग्नि में आहुतियाँ अर्पित करने के पश्चात्, ऋषियों ने अपने बीच बैठे एक अतिथि की ओर दृष्टि की — सूत जी, उग्रश्रवा, प्राचीन कथाओं के ज्ञाता। वे रोमहर्षण के पुत्र हैं, और उन्हें पूर्व चित्र वाले शुकदेव जी से भिन्न समझना चाहिए। ऋषियों ने उनका सत्कार किया; और जब वे आसन पर विराजमान हुए, तब ऋषियों ने पूर्ण श्रद्धा के साथ अपने प्रश्न उनके समक्ष रखे। इस सरल शिष्टाचार में — प्रश्न पूछने से पूर्व गुरु का सम्मान करने में — भागवत मौन रूप से हमें दिखा देता है कि पवित्र ज्ञान किस प्रकार खोजा जाना चाहिए।

प्रथम प्रश्न: एकमात्र परम कल्याण

“हे निष्पाप सूत जी,” ऋषियों ने आरम्भ किया, “आपने समस्त पुराणों, इतिहासों और धर्मशास्त्रों का अध्ययन भी किया है और प्रवचन भी। जो कुछ दिव्य महर्षि बादरायण — स्वयं वेदव्यास — तथा अन्य महान ऋषियों को ज्ञात है, वह सब आप वास्तव में उनकी कृपा से जानते हैं, जो कृपा आपने अपने निष्कपट और शुद्ध हृदय से अर्जित की; क्योंकि गुरु अपने प्रिय और योग्य शिष्य को अपने गूढ़तम रहस्य भी बता देते हैं। अतः कृपया हमें वह बताइये जिसे आपने इन समस्त शास्त्रों के अध्ययन से समस्त मनुष्यों के परम कल्याण का अमोघ और सुगम साधन निश्चित किया है।”

तत्पश्चात् उन्होंने उस युग की चर्चा की जिसमें वे — और हम — अब निवास करते हैं। इस कलियुग में, उन्होंने कहा, मनुष्य प्रायः अल्पायु और आलसी हैं, ईश्वर-साक्षात्कार के मार्ग पर चलने में अनिच्छुक, मन्दबुद्धि, दुर्भाग्यशाली, और रोगों तथा अनेक क्लेशों से पीड़ित हैं। शास्त्र भी अनेक हैं, और वे कोई एक ही साधना नहीं, अपितु अनेकानेक साधनाओं का उपदेश देते हैं; इतने विशाल होने के कारण उन्हें खण्ड-खण्ड करके ही सुना जा सकता है। “इसलिए,” ऋषियों ने प्रार्थना की, “अपनी विवेकपूर्ण दृष्टि से उन सबका सार निकालकर हम श्रद्धालुओं से कहिये — जिससे हमारा मन शान्त और प्रसन्न हो जाये।”

यही भागवत का प्रथम महान प्रश्न है: एक कठिन युग में, इतने शास्त्र और इतने अल्प समय के बीच, वह एक वस्तु क्या है जो करने योग्य है?

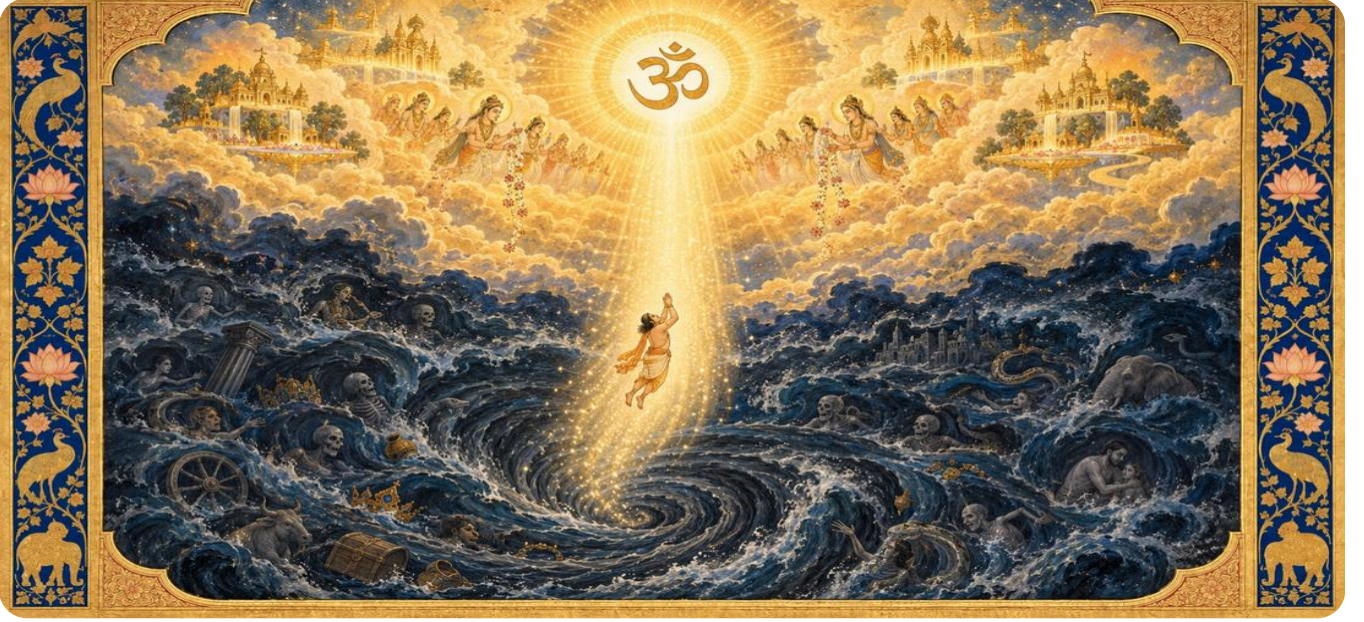
द्वितीय प्रश्न: भगवान् अवतार क्यों लेते हैं

अब ऋषि अपनी अभिलाषा के मर्म तक पहुँचते हैं। “हे सूत जी, आपका कल्याण हो — आप उस प्रयोजन को जानते हैं जिसके लिए भक्तवत्सल भगवान् ने देवकी और उनके पति वसुदेव के पुत्र-रूप में जन्म लिया। इसे हमें बताइये, जो सुनने के लिए इतने उत्सुक हैं; क्योंकि इस पृथ्वी पर भगवान् का अवतार समस्त प्राणियों के संरक्षण और कल्याण के लिए है।”

और तब वे उस पवित्र नाम के विषय में एक सत्य कहते हैं जो तब से असंख्य आत्माओं का आश्रय बन गया है।

पवित्र नाम की महिमा

जो जन्म-मृत्यु के इस भयंकर भँवर में गिर गया है, ऋषि घोषणा करते हैं, वह भगवान् के नाम का उच्चारण मात्र से मुक्त हो सकता है — विवश होकर भी, बिना पूर्ण इच्छा के भी। क्योंकि भगवान् भय के भी भय हैं; भय स्वयं उनसे भयभीत रहता है। दुर्बलता में लिया गया नाम, विपत्ति में उठी हुई पुकार भी उन तक पहुँचती है, और जिनसे भय स्वयं डरता है, वे गिरी हुई आत्मा को तत्काल मुक्त कर देते हैं।



भगवान् के नाम का विवश उच्चारण भी गिरी हुई आत्मा को मुक्त कर देता है, क्योंकि भय स्वयं उनसे डरता है (श्लोक 14)।

आपन्नः संसृतिं घोरां यन्नाम विवशो गृणन् ।

ततः सद्यो विमुच्येत यद्विभेति स्वयं भयम् ॥ १४ ॥

āpannaḥ saṁsṛtiṁ ghorāṁ yan-nāma vivaśo gr̥ṇan । tataḥ sadyo vimucyeta yad bibheti svayaṁ bhayam ॥ 14 ॥

अर्थ: जो जन्म-मृत्यु के भयंकर भँवर में गिरा है, वह भगवान् के नाम का विवश होकर उच्चारण करने मात्र से तत्काल मुक्त हो जाता है; क्योंकि भय स्वयं उनसे भयभीत रहता है। (स्कन्ध 1, अध्याय 1, श्लोक 14)

ऋषि अपने कथन को दो देदीप्यमान उपमाओं से दृढ़ करते हैं। जिन ऋषियों ने भगवान् के चरणों की शरण ली है, और इसलिए जो परम शान्ति में स्थित रहते हैं, वे अपने संसर्ग में आने वाले सबको पवित्र कर देते हैं — और तत्काल पवित्र कर देते हैं; जबकि दिव्य गंगा का जल भी हृदय को केवल दीर्घ और निरन्तर सेवन से ही शुद्ध करता है। तब कौन — अपनी आत्मा को शुद्ध करने की अभिलाषा रखते हुए भी — उन दिव्य भगवान् की महिमा सुनने से इनकार करेगा, जिनके चरित्र पवित्र सन्तों द्वारा गाये जाते हैं, और जिनकी महिमा कलियुग के मल को धो डालती है? इस अन्धकारमय युग की औषधि, ऋषि संकेत करते हैं, पहले से ही उनके हाथों में है: वह है भगवान् की महिमा का श्रवण।

उनकी लीलाओं को सुनने की अभिलाषा

अब उनकी प्रार्थना और पूर्ण होती है। वे किसी एक कथा की नहीं, अपितु भगवान् के समस्त अवतारों के देदीप्यमान वृत्तान्त की याचना करते हैं। “हम श्रद्धालुओं को उन भगवान् के महान कार्य सुनाइये जो लीलापूर्वक अनेक रूप धारण करते हैं — वे कार्य जो नारद आदि ऋषियों द्वारा गाये गये हैं। उस सर्वशक्तिमान् के अवतारों की मंगलमयी कथाएँ कहिये, जो अपनी योगमाया, अपनी दिव्य शक्ति से नाना प्रकार की लीलाएँ रचते

हैं। हमारी बात यह है कि हम उनके चरित्र सुनकर कभी तृप्त नहीं होते — वे चरित्र जो सच्चे रसिक श्रोताओं को पद-पद पर अधिकाधिक आनन्दप्रद प्रतीत होते हैं। निश्चय ही उन दिव्य श्रीकृष्ण ने, जिन्होंने अपने को मनुष्य के रूप में छिपा रखा था, अपने बड़े भाई श्रीबलराम के साथ मिलकर ऐसे कार्य किये जो समस्त मानवी शक्ति से परे थे।”



श्रीकृष्ण ने, मनुष्य-रूप में छिपे हुए, अपने बड़े भाई श्रीबलराम के साथ मानवी शक्ति से परे कार्य किये।

तृतीय प्रश्न: धर्म कहाँ चला गया

अन्त में ऋषि प्रकट करते हैं कि समस्त कालों में से अभी, और यहीं इसी वन में, वे ये प्रश्न क्यों उठा रहे हैं। “यह जानकर कि कलियुग आ चुका है, हम इस पवित्र आश्रम में, जो श्रीविष्णु को प्रिय है, एक दीर्घ यज्ञ-सत्र के लिए एकत्र हुए हैं — और इस प्रकार हमें श्रीहरि की कथाएँ सुनने के लिए पर्याप्त समय मिला है। यह कलियुग मनुष्यों के हृदय की पवित्रता को हर लेता है, और इस पर विजय पाना अत्यन्त कठिन है। फिर भी, इसे पार करने के लिए उत्सुक हम पर विधाता ने आपसे हमारा मिलन इस प्रकार करा दिया है — जैसे उन्हें एक कुशल कर्णधार मिल जाता है जो प्रचण्ड समुद्र को पार करना चाहते हैं।”

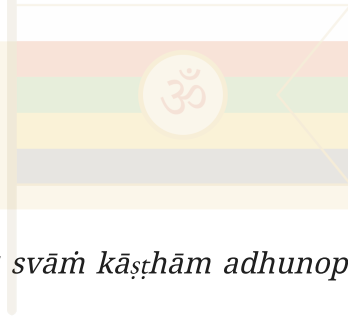


विधाता ने ऋषियों का सूत जी से मिलन इस प्रकार कराया, जैसे प्रचण्ड समुद्र पार करने के इच्छुकों को एक कुशल कर्णधार मिल जाता है।

और तब वह अन्तिम प्रश्न आता है, वह प्रश्न जिस पर समस्त शास्त्र घूमता है। योग के स्वामी, ब्राह्मणों के हितैषी और धर्म के रक्षक स्वयं भगवान् जब अपने परम धाम लौट गये हों, तो अब यह जानना शेष रह जाता है कि धर्म को किसका सहारा मिला।

ब्रूहि योगेश्वरे कृष्णे ब्रह्मण्ये धर्मवर्मणि ।

स्वां काष्ठामधुनोपेते धर्मः कं शरणं गतः ॥ २३ ॥



brūhi yogesvare kṛṣṇe brahmaṇye dharma-varmaṇi । svām kāṣṭhām adhunopete dharmah kaṁ śaraṇaṁ gataḥ ॥ 23 ॥

अर्थ: चूँकि योग के स्वामी, ब्राह्मणों के हितैषी और धर्म के कवच श्रीकृष्ण अपने धाम को प्रस्थान कर चुके हैं, हमें बताइये: धर्म ने अब किसकी शरण ली है? (स्कन्ध 1, अध्याय 1, श्लोक 23)

यह प्रश्न करुणा और भय से भरा है। धर्म के रक्षक भगवान् मर्त्य दृष्टि से ओझल हो गये हैं; कलियुग आ गया है; और जिस संसार ने उन्हें चाहा, वह विचारता है कि अब सद्भाव कहाँ आश्रय पायेगा। नैमिषारण्य की पवित्र वायु में यह प्रश्न टँगे रहते हुए, पूज्य सूत जी बोलने को उद्यत होते हैं — और समस्त भागवत-सागर उत्तर में उमड़ पड़ने की प्रतीक्षा करता है।

प्रमुख शिक्षाएँ

1. श्रद्धा और उचित प्रश्न से आरम्भ करें। ज्ञान दिये जाने से पूर्व गुरु का सम्मान किया जाता है (श्लोक 5)। समस्त भागवत किसी माँग से नहीं, अपितु एक विनम्र, सुगठित जिज्ञासा से गतिमान होता है — यह स्मरण कि खोजने वाला हृदय उत्तर के समान ही महत्त्वपूर्ण है।
2. परम सत्य ही सबका उद्गम, आधार और लक्ष्य है। मंगलाचरण (श्लोक 1) मन को उस एक तत्त्व पर स्थिर करता है जिससे सब उत्पन्न होता है, जिसमें सब स्थित है, जिसमें सब लीन होता है — स्वयंप्रकाश और समस्त माया से परे।

3. भागवत धर्म स्वार्थरहित प्रेम है। यहाँ सिखाया गया परम धर्म (श्लोक 2) प्रत्येक स्वार्थ से रहित है, मोक्ष की कामना से भी — केवल भगवान् के लिए अर्पित भक्ति।

4. भगवान् का श्रवण ही कलियुग की औषधि है। एक अल्प, विचलित, रोगग्रस्त युग में (श्लोक 10) ऋषि एक ही पर्याप्त साधना पाते हैं: भगवान् की महिमा को सुनना और कहना (श्लोक 16), जो कलियुग के मल को धो डालती है।

5. पवित्र नाम विवश को भी मुक्त करता है। नाम के अतिरिक्त कोई योग्यता आवश्यक नहीं (श्लोक 14)। दुर्बलता में उच्चरित भी, यह आत्मा को जन्म-मृत्यु के भँवर से मुक्त कर देता है।

6. सत्संग तत्काल पवित्र करता है। भगवान् के भक्त अपने समीप आने वाले सबको तुरन्त पवित्र कर देते हैं (श्लोक 15) — पवित्र नदी से भी शीघ्रतर एक कृपा।

7. भगवान् सबके कल्याण के लिए अवतार लेते हैं। उनके जन्म और कर्म अपने लिए नहीं, अपितु प्रत्येक प्राणी के संरक्षण और कल्याण के लिए हैं (श्लोक 13) — यही कारण है कि ऋषि उनकी कथाएँ सुनना चाहते हैं।

एक भक्तिमयी अनुभूति

भागवत जिस प्रकार आरम्भ होता है, उसमें कुछ शान्त रूप से हृदयस्पर्शी है। इस अध्याय में कोई चमत्कार नहीं होता; किसी असुर का वध नहीं होता। जो घटित होता है वह छोटा है और, अपने ढंग से, महान् है: सच्चे लोगों की एक सभा, किसी पवित्र स्थल में एकत्र, उचित प्रश्न पूछती है। वे धन या शक्ति पाने का उपाय नहीं पूछते। वे उस एक वस्तु के विषय में पूछते हैं जो करने योग्य है, भगवान् के आगमन के अर्थ के विषय में, और इस विषय में कि अब जब वे दृष्टि से ओझल हो गये, तब सद्भाव कहाँ आश्रय पाये। और प्रश्न में ही उत्तर चमकने लगा है — क्योंकि भगवान् की महिमा का श्रवण ही, हमें बताया जाता है, हमारे युग की औषधि है। जब हम इस अध्याय के साथ बैठते हैं, तब हमें उन ऋषियों के समान बनने का निमन्त्रण मिलता है: चंचल मन को शान्त करने का, पवित्र का सम्मान करने का, और अपने सच्चे प्रश्नों को भगवान् के चरणों में ले जाने का, इस विश्वास के साथ कि वे हमारे भय से भी अधिक निकट हैं।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज कुछ क्षण निकालकर वही करें जो ऋषियों ने किया — भगवान् की महिमा सुनें। भागवत के कुछ श्लोकों को भी धीरे-धीरे पढ़ें या सुनें, और यदि सम्भव हो तो भगवान् के किसी एक पवित्र नाम का कोमलता से जप करें, यह स्मरण रखते हुए कि विवश उच्चारण भी उन तक पहुँचता है। अभ्यास छोटा और सच्चा हो। आरम्भ के लिए इतना ही पर्याप्त है।

उपसंहार

इस प्रकार श्रीमद्भागवत का प्रथम अध्याय समाप्त होता है — वह कथा जो नैमिषारण्य वन में प्रकट होती है, इस महापुराण के प्रथम स्कन्ध में, जिसे ईश्वर-साक्षात्कारी जन परमहंस-संहिता, सिद्ध आत्माओं का ग्रन्थ कहते हैं। इस आरम्भिक अध्याय, श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 1 अध्याय 1 में, व्यास जी परम सत्य को प्रणाम करते हैं, हमें वेद का पका हुआ फल प्रदान करते हैं, और फिर हमें नैमिषारण्य के ऋषियों को सुनने देते हैं जब वे अपने तीन महान प्रश्न पूछते हैं: परम कल्याण का एकमात्र अमोघ साधन क्या है, भगवान् अवतार क्यों लेते हैं, और अब जब श्रीकृष्ण अपने धाम

लौट गये, तब धर्म ने किसकी शरण ली। ये प्रश्न जितने उनके हैं उतने ही हमारे भी। अगले अध्याय से पूज्य सूत जी अपना उत्तर आरम्भ करेंगे, और पवित्र कथा हमारे समक्ष एक पुष्प के समान खुलेगी। हम भी, नैमिषारण्य के उन जिज्ञासुओं के समान, अपने चंचल मन को श्रद्धा से समेटें और भगवान् की महिमा के अमृत का पान बार-बार करें।

श्रीमद्भागवत की दिव्य वाणी हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ और आभार

मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (हिन्दी/अंग्रेज़ी), प्रथम स्कन्ध, प्रथम अध्याय, ग्रन्थ पृष्ठ 1-3।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम · बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट। पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं संस्तुति के अनुसार प्रस्तुत।



ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-1-chapter-1-questions-of-the-sages-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञडम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट